ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-2, No.-2, PP-315-317,YEAR-2015

योगदर्शन एवं अन्तरंग योग

❑ जय प्रकाश नारायण यादव

प्रस्तावना *– योग आर्य जाति की प्राचीनतम विद्याओं में से एक है। इस विद्या में विवाद का कोई स्थान नहीं है। यह मोक्ष प्राप्त करने का सर्वोत्तम एवं सर्व सरल युक्ति है जिसका अनुसरण कर कोई भी व्यक्ति नियमित अनुसरण एवं अभ्यास से अपने जीवन को सफल बना सकता है। हमारे शास्त्रों में मोक्ष को ही जीवन का अन्तिम लक्ष्य माना गया है। मोक्ष की अवस्था को ही परम सुख की अवस्था कहा गया है जिसको प्राप्त करने का साधन योग है। योग भवसंसार में व्याप्त विविध क्लेशों से मुक्ति दिलाता है तथा व्यथित जीवात्मा का उद्धार करते हुए उसे परम ब्रह्म से सीधे साक्षात्कार कराता है। योग भक्ति एवं ज्ञान का प्रधान सागर है। योगदर्शन के मुख्य सिद्धान्त सूत्र–रूप में वर्णित है जिनके रचयिता महर्षि पतंजलि है। महर्षि पतंजलि ने 195 सूत्रों के माध्यम से सम्पूर्ण योग दर्शन को वर्णित किया है।*

वास्तव में योग एक अत्यन्त व्यापक विषय है। योग एक ऐसा शब्द है जिसका उल्लेख सभी प्राचीनतम एवं नवीन शास्त्रों जैसे– वेद, उपनिषद्, महाभारत, रामायण तथा आयुर्वेदिक ग्रन्थों में मिलता है। महर्षि पतंजलि द्वारा रचित योग–सूत्र में योग विषय पर गहनता एवं सम्पूर्णता के साथ चर्चा की गयी है, इसीलिये इसे योग दर्शन कहा गया है।

योग शब्द के मूल का विश्लेषण एंव सिद्धान्तों में भिन्नता के कारण योग की अनेक शाखायें भी है। जैसे– क्रिया योग, कर्म योग, हठ योग, मन्त्र योग, ज्ञान योग, लय योग, ध्यान योग, भक्ति योग, राजयोग आदि। उपरोक्त सभी शाखायें योग से जुड़ी हुई है किन्तु राजयोग अपने आप में अनोखा है। राजयोग के सानिध्य में साधक अपने पारिवारिक तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन करते हुए आध्यात्मिकता के चरम को प्राप्त करता है। महर्षि पतंजलि के योग को कई नामों से जाना जाता है– जैसे– योगदर्शन, अष्टांगयोग तथा राजयोग।

महर्षि पतंजलि ने चित्त की वृत्तियों को नियन्त्रित करने को ही योग कहा है–

"योगचित्तवृत्तिनिरोधः।।"

चित्त तत्वप्रधान प्रकृति परिणाम है। चित्त प्रकृति जन्य होने के कारण जड़ है जो प्रतिक्षण चंचल अवस्था में होता है। चित्त की मूल रूप से पांच अवस्थायें होती है– मूढ़, क्षिप्त, विक्षिप्त, एकाग्र तथा निरूद्ध। महर्षि पतंजलि इसी चित्त की चंचलता पर नियंत्रण की बात करते हैं।

महर्षि पतंजलि ने योग दर्शन में आठ अंगों का उल्लेख किया है जिसे अष्टांग योग के नाम से जाना जाता है। योग दर्शन में अष्टांग योग के सम्बन्ध में लिखा गया है–

"यमनियमासन प्राणायामप्रत्याहा रधारणा ध्यानसमाधयोऽष्टावंगानि।।"

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान तथा समाधि ये अष्टांगयोग के आठ अंग हैं। अष्टांगयोग के प्रथम पांच अंगों (यम, नियम, आसन, प्राणायाम तथा प्रत्याहार) को बहिरंग योग तथा शेष अन्य तीन अंग (धारण, ध्यान तथा समाधि) अन्तरंग योग के नाम से जाने जाते हैं। इसे योग की भाषा में बहिरंग को बहिरंग साधना तथा अन्तरंग को अन्तरंग साधना भी कहा जाता है। इन दोनों बहिरंग तथा अन्तरंग के बीच गहरा सम्बन्ध भी होता है। बहिरंग साधना अन्तरंग साधना के लिये मूल मजबूत आधार का कार्य करती है। बहिरंग साधना के अनुष्ठित

असि० प्रोफेसर– शारीरिक शिक्षा विभाग, समता पी०जी० कालेज, सादात, गाजीपुर (उ०प्र०) भारत

होने अर्थात सिद्ध होने पर ही अन्तरंग साधना का अधिकार प्राप्त होता है। प्रस्तुत अध्ययन अन्तरंग योग या अन्तरंग साधना पर केन्द्रित है।

अन्तरंगयोग– अन्तरंग वास्तव में एक संस्कृत शब्द है जिसका अर्थ है आन्तरिक या अन्दर। अन्तरंग योग साधक के आन्तरिक पथ को प्रदर्शित करता है जो अष्टांगयोग के अन्तिम तीन अंगों (धारणा, ध्यान तथा समाधि) से जुड़ा है। अन्तरंग साधना आन्तरिक चेतना की अवधारणा है जिसे साधक अभ्यास के दौरान अनुभव करता है। अन्तरंग साधना में साधक को बाह्य संवेदनाओं की अनुभूति नहीं होती है। अन्तरंग साधना को बाहर से नहीं देखा जा सकता। अन्तरंग साधना को ही मुक्ति की युक्ति कहा गया है जो सीधे मन से न जुड़कर आत्मा से जुड़ा हुआ है। अन्तरंग योग के मुख्य तीन अंग हैं–

1. धारणा,
2. ध्यान
3. समाधि।

1. धारणा– धारणा का सामान्य अर्थ एकाग्रता से है जिसमें किसी एक बिन्दु पर अपने ध्यान को केन्द्रित कर साधक अपने मन के विकर्षणों को दूर करता है। धारणा में ध्यान का केन्द्र बिन्दु कोई छवि, कोई देवता, कोई चक्र मंत्र या एक वस्तु हो सकती है जिसको साधक बार–बार सतत रूप से धारण करने का प्रयास करता है। दूसरे शब्दों में चित्त अर्थात मन को किसी एक विचार में बाधने की क्रिया को धारणा कहते है।

धारणा अष्टांगयोग का छठवां अंग है। धारणा शब्द संस्कृत के 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ है– संभालना या थामना या सहारा देना। योग–सूत्र में धारणा के सम्बन्ध में कहा गया है–

"देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।।"

अर्थात किसी स्थान पर चित्त को स्थिर कर लेना धारणा है। बहिरंग योग के माध्यम से इन्द्रियों को विषयों से हटाकर चित्त में स्थिर किया जाता है तथा स्थिर किये हुए चित्त को एक स्थान पर रोक लेना धारणा कहलाता है। धारणा चित्त की स्थिरता का द्योतक है।

अतः योग में धारणा का अर्थ है मन या चित्त को किसी एक बिन्दु पर लगाये रखना या टिकाये रखना। वास्तव में धारणा ध्यान की आधारशिला है। बिना धारणा के ध्यान की कल्पना नहीं की जा सकती। धारणा के सम्बन्ध में व्यास मुनि व्यासभाष्य योग दर्शन में कहते हैं–

"नाभिचक्रे, हृदयपुण्डरीके मुर्ध्नि ज्योतिषि, नासिकाग्रे, जिह्वाग्र इत्येवमादिषु देशेषु बाह्ये वा विषयेचित्तस्य वृत्तिमात्रेण बन्ध इति धारणा।।"

अर्थात नाभिचक्र में, हृदरय कमल में, मस्तकगत प्रकाश में, नासिका के अग्र भाग में, जिह्वा के अग्रे भाग आदि प्रदेशों में या वाह्य विषयों में चित्त का केवल वृत्ति से बाधना धारणा कही जाती है। यहाँ पर धारणा के सन्दर्भ में कहा गया है कि किसी देश विशेष में वृत्तिमात्र (ज्ञानमात्र) से चित्त को बाधना, रोकना या स्थिर करना ही धारणा है। यहाँ पर धारणा के दो स्थान हैं– एक हैं आन्तरिक तथा दूसरा है– वाह्य। नाभि हृदय, नासिका आदि आन्तरिक स्थान है तथा वृक्ष, पर्वत, नदी आदि वाह्य स्थान है।

2. ध्यान– ध्यान अष्टांग योग का सातवां तथा अन्तरंग योग का दूसरा अंग है। किसी विषय की धारणा करके उसमें मन को एकाग्र करना ध्यान है। शाब्दिक अर्थ के रूप में देखा जाय तो ध्यान के कई समानार्थी शब्द है जैसे– बोध, जागरूकता, एकाग्रता, दृष्टा भाव आदि। अंग्रेजी में इसे मेडीटेशन कहते हैं। ध्यान के सन्दर्भ में योग सूत्र में कहा गया है– **"तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।"**

अर्थात जहां चित्त को लगाया जाय उसी में वृत्ति का लगातार चलना या लगे रहना ध्यान है। धारणा में साधक अपने चित्त को एक जगह ठहराता है तथा ध्यान में साधक ठहरे हुए चित्त में वृत्तियों को सतत चलाना या लगाये रहना ध्यान है।

कुछ लोग आँख बन्द करके बैठ जाने को ध्यान कहते हैं तथा कभी–कभी कहा जाता है कि आप कुछ समय के लिये ईश्वर का ध्यान करें। वास्तव में यह ध्यान नहीं है बल्कि यह स्मरण है।

वास्तविक ध्यान तो क्रियाओं तथा विचारों से मुक्ति का नाम है। अनावश्यक विचारों एवं कल्पनाओं को अपने मन से मिटाकर शुद्ध एवं निर्मल मौन में चले जाना ही ध्यान है। अतीत की घटनाओं, विचारों,कल्पनाओं में खोये रहना ध्यान विरूद्ध है। जब साधक ध्यान में अनवरत लगा रहता है तो उस समय उसके चित्त पर कल्पनाओं एवं विचारों का बिल्कुल प्रभाव नहीं पड़ता है। ध्यान की अवस्था में मन एवं मस्तिष्क दोनों मौन हो जाते हैं। ध्यान के सन्दर्भ में व्यास भाष्य योग दर्शन में कहा गया है–

"तस्मिन्देशे ध्येयालम्बनस्य प्रत्ययस्यैकतानता सदृशः प्रवाहः प्रत्ययान्तरेणापरामृष्टो ध्यानम्।"

अर्थात धारणा विषयक प्रदेश में ध्येय रूपी आलम्बन वाले ज्ञान की एकरूपता अर्थात निरन्तर प्रवाह ध्यान कहलाता है। ध्यान के विषय में महर्षि कपिल कहते हैं–

"रागोपहर्तिर्ध्यानम्।।"

अर्थात राग को समाप्त हो जाना ही ध्यान है। आगे पुनः कहा गया है–

"ध्यानं निर्विषयं मनः।"

3.समाधि– समाधि अष्टांग योग का अन्तिम आठवां अंग है तथा अन्तरंग योग का तीसरा अंग है। मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य समाधि की अवस्था को प्राप्त करना है। साधक समाधि की अवस्था को प्राप्त करने के बाद ब्रह्ममयहो जाता है तथा जगत के सभी बन्धनों से मुक्त हो जाता है।

ध्यान की उच्चतम् अवस्था को समाधि कहा गया है। जब साधक ध्येय वस्तु के ध्यान में पूर्ण रूप से इस प्रकार विलीन हो जाता कि उसे खुद के अस्तित्व का ज्ञान नहीं रहता, साधक की यही स्थिति या अवस्था समाधि कहलाती है। समाधि के सन्दर्भ में योग–सूत्र में कहा गया है–

"तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।।"

अर्थात ध्यान में जब ध्येयमात्र के स्वरूप या स्वभाव को प्रकाशित करने वाला स्वतः अपने स्वरूप शून्यता का अनुभव करने लगता है तब साधक की यह अवस्था समाधि कहलाती है। समाधि के विषय में व्यास भाष्य योग दर्शन में कहा गया है–

"ध्यानमेव ध्येयाकारनिर्भासं प्रत्ययात्मकेन स्वरूपेण शून्यमिव यदा भवति ध्येयस्वभावावेशान्तदा समाधिरित्युच्यते।।"

अर्थात ध्येयकार में भासित होने वाला ध्यान ही जब अपने ज्ञानात्मक स्वरूप से रहित हो जाता है तथा स्वतः ध्येय के स्वभाव को प्राप्त कर लेता है, यही समाधि है।

निष्कर्ष– अतः अन्तरंग योग के प्रमुख तीन अंग है– धारणा, ध्यान तथा समाधि। साधक द्वारा किसी एक बिन्दु पर अपने ध्यान को केन्द्रित करना धारणा है। इसमें साधक अपने चित्त को किसी एक विषय में बाध ाने की चेष्टा करता है या बाधता है। ध्यान में साधक धारणा की स्थिति को अनवरत जारी रखता है। अर्थात चित्त की एकाग्रता का अनवरत बने रहना ध यान की अवस्था है तथा जब साधक ध्येय वस्तु के ध यान में इस प्रकार विलीन हो जाता है कि उसे खुद के अस्तित्व का ज्ञान नहीं रहता है तो साधक की यह स्थिति समाधि कहलाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. योग सूत्र– 1/2
2. वही– 2/29
3. वही– 3/1
4. व्यास भाष्य योग दर्शन– 3/1
5. योग सूत्र– 3/2
6. व्यास भाष्य– 3/2
7. सांख्य दर्शन– 3/30
8. साख्य दर्शन–6/25
9. योग–सूत्र 3/3
10. व्यास भाष्य– 3/3

*****